ORIGINAL RESEARCH PAPER

Hindi

मौर्योत्तरकालीन समाज मे स्त्रियों की स्थिति

KEY WORDS:

सन्तोश कुमार ग्राम– बहुअरवा खुर्द, पोस्ट– सुगौली, थाना – शिकारपुर, जिला– प. चम्पारण, बिहार – 845455,

ABSTRACT

प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था मे स्त्रियॉ, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे समान रूप से आदरित और प्रतिश्ठित थीं। शिक्षा, धर्म, राजनीति और सामाजिक विकास मे उनका महान योगदान था, परंतु स्त्रियों की स्थिति मे युग के अनुरूप परिवर्तन होता रहा है। उनकी स्थिति एवं अधिकार मे वैदिक काल से अनेक उतार–चढ़ाव आते रहे तथा उनमे परिवर्तन भी होते रहे हैं जिसके कारण परवर्ती काल मे पुरूशों की तुलना मे उन्हें निम्न स्थान ही प्राप्त हुआ। खासकर मौर्योत्तर भारत मे वैदेशिक आक्रांताओं के कारण स्त्रियों की स्थिति मे लगातार गिरावट आई। इस काल के धर्माचार्यो एवं स्मृतिकारों ने भी स्त्रियों की दशा एवं दिशा को निर्णायक रूप से प्रभावित किया।

उद्देष्य या महत्व

इस तरह मौर्योत्तरकालीन समाज मे स्त्रियों की स्थिति एवं अधिकार मे परिचर्तन का एक नया अध्याय शुरू होता है। मगर दुर्भाग्य से प्रायः सभी महत्वपूर्ण विद्वानों ने इस काल को अंधकार युग मानकर इसे अपने अध्ययन मे प्र्याप्त महत्व नही दिया। यही कारण है कि भारतीय समाज मे स्त्रियों के स्थिति से संबंधित अनेक अध्ययनों के बावजूद मौर्योत्तर काल से जुड़े कई महत्वपूर्ण पहलू अनछूए रह गये है।

इसलिए इस काल की स्त्रियों की स्थिति का अध्ययन करना अत्यंत ही उद्देश्यपूर्ण एवं समाचीन लगता है क्योकि मौर्यो के पतन के पश्चात् अनेक विदेशियों का आक्रमण भारत मे हुआ, वे भारत मे लम्बे समय तक अपना अस्तित्व बनाए रखे, जिससे वे भारतीय समाज मे स्थायी रूप से रस–बस गये और उसका व्यापक प्रभाव समकालीन स्त्रियों पर भी पड़ा। अतः संबंधित काल मे स्त्रियों की स्थिति का अध्ययन करना, कई मामलों मे महत्व रखता है।

स्थिति, अधिकार और दशा

मौर्योत्तरकाल मे सामाजिक परिवर्तन का एक नया स्वरूप दिखयी देता है और स्त्रियों की स्थिति पर उसका सीधा प्रभाव परिलक्षित हुआ दिखाई देता है। 'मनु कहते है कि जीवन के प्रत्येक समय स्त्री की रक्षा तथा सम्मान होना चाहिए। बचपन मे पिता को, युवावस्था मे पत्ति को और वृद्धावस्था मे पुत्र को उसकी रक्षा करनी चाहिए। उनको कभी भी अरक्षित नही छोड़ना चाहिए।'[1] 'वह पिता जो समय पर अपनी कन्या का विवाह नही कर देता, वह पति जो अपनी पत्नी का साथ उचित अवसर मे नही देता और वह पुत्र जो पिता की मृत्यु के बाद उनकी रक्षा नही करता निंदा के पात्र है।'[2] 'परंतु इसका यह तात्पर्य नही था कि स्त्री को घर मे बंदकर के रखा जाए।'[3] 'बल्कि उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए, स्त्री को घर के हिसाब–किताब मे, भोजन–पात्रों की सफाई मे, धार्मिक कृत्यों की सहायिका के रूप मे और भोजन बनाने के कार्य मे व्यस्त रहना चाहिए।'[4] 'स्त्री–चरित्र के संबंध मे छः अवस्थाओं का उल्लेख महाभाश्य मे हुआ है– मद्यपान, दुश्ट तथा दुर्जन समागम, पति वियोग, अकेले विचरण करना, रात्रि मे देर से सोना और दूसरे के घर मे रहना। ये स्त्री के चरित्र भ्रश्टता का कारण बनती है।'[5] 'स्त्री का सम्मान करने के लिए मनु का कथन है कि पिता, भ्राता, पति तथा देवर को स्त्री का उचित सम्मान और अलंकार करना चाहिए। जहॉ पर स्त्रियों का सम्मान होता है वहॉ देवताओं के वास होते है। जहॉ पर स्त्रियों को कश्ट होता है वह परिवार अविलंब नश्ट हो जाता है।'[6] 'मातृत्व को प्राप्त होना स्त्रियों का गौरवपूर्ण अधिकार है। इसलिए वेदों मे धार्मिक कृत्य पति द्वारा पत्नी के साथ सम्पादित करने का विधान है।'[7]

विवाह एक सर्वव्यापी और सार्वभौम संस्था है जो भारत मे सभी कालों एवं समाजों मे विद्यमान रहा है। वस्तुतः मौर्योत्तर काल मे विवाह संस्कार मे स्त्रियों की स्थिति का अध्ययन करने के लिए समकालीन ग्रंथों के अध्ययन से प्रयाप्त प्रकाश पड़ता है। 'इस काल मे भी ब्राह्म, देव, आर्श, प्राजापत्य, आसुर, गांधर्व, राक्षस एवं पैचास – इन आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख है।'[8]

ब्रह्म विवाह वह कहलाता है जिसमे श्रुति (वेद का ज्ञान) और शील से सम्पन्न वर को कन्या का पिता स्वयं अपने घर बुलाए तथा उसे वस्त्राभूशणों से अलंकृत कन्या को दान करे। 'आपसतम्ब और मनु ने ब्रह्म विवाह के लिए वर एवं वधू की योग्यता निर्धारित की है।'[9] 'देव विवाह मे वर के लिए यह अपेक्षा की जाती थी कि वह द्विज हो और याज्ञिक कर्मकांड मे निपुण हो।'[10] 'आर्श विवाह मे कन्या का पिता वर पक्ष से गाय या बैलों की जोड़ी उपहार के रूप मे प्राप्त करता था। उसके बदले मे अपनी लड़की वर को सुपुर्द किया जाता था।'[11] अर्थशास्त्र मे भी आर्श विवाह का वर्णन मिलता है। 'महाभारत मे शाल्य ने अपनी बहन माद्री के विवाह के लिए कुल–प्रथा के अनुपालनार्थ भीश्म से बिक्रय–मूल्य ग्रहण किया था।'[12] 'प्रजापत्य विवाह पद्धति मे कन्या के तरफ से वर का यथोचित आदर–सत्कार किया जाता था और कन्या अर्पित कर आशा की जाती थी कि वर–वधू दोनों मिलकर धर्मवत गृहस्थ जीवन बीताएं।'[13] धर्मशास्त्रों मे इन पहले चार प्रकार के विवाह – ब्राह्म, देव, आर्श और प्राजापत्य को सधर्म (धर्मानुकूल) और प्रज्ञास्त माना गया है। इन चारों मे विशेश भेद नही है। कन्यादान सबमे समान रूप से पाया जाता है।

अगले चार तरह के विवाहों – आसुर, गांधर्व, राक्षस और पैचास मे कन्यादान का कोई स्थान नही था। 'आसुर विवाह मे वर पक्ष की ओर से कन्या को धन प्रदान किया जाता था। यह एक अर्थ मे धन से दुल्हन प्राप्त करना था।'[14] इस विवाह के नमूने पुरानी पुस्तकों मे अनेकों बार उद्धरित है। परंतु इस प्रकार के विवाह को अच्छा नही माना जाता था। 'जब नवयुवक–नवयुवती स्वयं इच्छा (मनमर्जी) से विवाह मंगल सूत्र मे बंध जाते थे तो ऐसे विवाह को गान्धर्व विवाह कहा जाता था। मनु ने इसे मैथुन्य और कामसंभव कहा है।'[15] यह प्रेम विवाह था जिसमे सगे–संबंधियों या परिजनों से सहमति नही ली जाती थी। प्राचीन काल मे ऐसे विवाह प्रकारों को बुरा भी नही मानते थे। 'राक्षस विवाह उसे कहते थे जिसमे कन्या का अपहरण कर उसके साथ विवाह किया जाता था।'[16] 'प्राचीन भारत मे इस प्रकार के जबरजस्ती विवाह भी होते थे। कतिपय क्षत्रियों मे इस विवाह को अच्छा भी माना जाता था।'[17] 'जब सोती हुई, मदहोश, उतेजित या उन्मत छोरी को चुपचाप अगवा कर, उठाकर उससे शादी रचा ली जाए तो इसे पैचाश विवाह कहा जाता था।'[18] इस प्रकार के विवाह को अधर्म माना गया है। अतः इसके उदाहरण साहित्य मे नही पाये जाते है।

इस समय के दौरान **स्वयंवर विवाह** की प्रथा भी प्रचलित थी, जिसमे वधू स्वयं अपने वर का चुनाव करती थी। विशेशकर शासकवर्ग मे इसका अधिक रिवाज रहा था। जबकि स्वयंवर–विवाह का उल्लेख धर्मशास्त्रों मे नही है। इस विवाह के उदाहरण कई प्राचीन साहित्यों मे मिलते है जैसे – रामायण मे सीता का स्वयंवर[19], महाभारत मे द्रोपति का स्वयंवर[20] और विक्रमांकदेवचरित मे चंद्रलेखा का स्वयंवर इत्यादि। आमजनों, गृहस्थों के लिए स्वयंवर का आयोजन कर सकना संभव नही होता था।

मौर्योतर समय मे बाल्यावस्था मे ही कन्याओं का विवाह कर देने की प्रवृति प्रारम्भ हो गई थी। 'मनुस्मृति के लेखानुसार तीस साल का व्यक्ति को बारह वर्शीय किशोरी से और चौबीस साल के पुरूश को आठ साल की कन्या के साथ विवाह करना चाहिए।'[21] याज्ञवल्क्यस्मृति मे तो यहॉ तक कहा गया है कि रजोदर्शन (मासिकधर्म शुभारम्भ) के पश्चात कन्या जिस समय तक अविवाहित रहती है, उतने समय तक उसके माता–पिता को भ्रूणहत्या का पाप लगता है। 'इस काल मे कन्या **बाल–विवाह** के साथ–साथ **व्यस्क विवाह** के भी सुराख मिलते है। यवन, शक आदि विदेशी मलेच्छ आक्रमणकारियों के कारण भारत मे जो परिवेश उत्पन्न हो गयी थी, उसी के परिणामस्वरूप अल्पायु मे ही बालिकाओं का हाथ पीला होने लगाा था।'[22]

मौर्योत्तर समयावधि मे **सगोत्र विवाह** को निसिद्ध माना जाता था और ब्याह–संबन्ध अपने ही वर्ण मे हुआ करता था। हालांकि **अनुलोम विवाह** इस काल मे दृश्टिगोचर थी। इस समय के धर्मसूत्रों, स्मृतिग्रंथों एवं पुराणों द्वारा अब यह प्रतिपादित किया जाने लगा कि उच्च वर्ग के आदमी अपने से नीच वर्ण की महिला/युवती से वैवाहिक सम्पर्क स्थापित कर सकते है। ऐसे विवाह ही अनुलोम कहलाये। 'पुश्यमित्र शुंग के सुपुत्र अग्निमित्र का विवाह क्षत्रिय नरेश यज्ञसेन की सुपुत्री मालविका से हुआ था।'[23]

प्रतिलोम विवाह मे निम्न वर्ग का पुरूश अपने से उच्च वर्ग की स्त्री के साथ शादी करता था। ऐसे विवाह भी इस काल मे कमोवेश प्रचलित थी। यद्यपि उनसे उपजे सन्तान को निश्कृश्ट (नीच–कुलीन) समझा जाता था। 'भागवत पुराण के अनुसार क्षत्रिय राजा नृप ने ब्राह्मण शुक कन्या के साथ विवाह किया था।'[24] और 'क्षत्रियवंशी ययाति ने ब्राह्मण शुक्र की पुत्री देवयानि से पाणिग्रहण किया।'[25] लेकिन ये उदाहरण अपवाद रूप मे ही मिले है। इस समय प्रतिलोम विवाहों का प्रचलन अत्याधिक नही था और उसे बुरा या घृणित समझा जाता था।

बहुविवाह की प्रथा अत्यंत प्राचीनकाल मे भारतवर्श मे प्रचलित थी। मौर्योत्तर काल मे भी इस परम्परा के सबूत मिलते है। पुरूश द्वारा दूसरी पत्नी करने के लिए दो प्रधान कारण धर्माचार्यो ने बनाया था – एक धर्म के निमित और दूसरे संतान के। खुद मनु के कई भार्याएं थी और याज्ञवल्क्य की मैत्रेयी और काव्यायानी नामक दो विदूशी पत्नियां थीं।'[26] याज्ञवल्क्रू के मत मे यदि पत्नी सुरापी (शराब पीनेवाली), व्याधिता (रोगिनी), धूर्त वन्ध्या, धन नश्ट करने वाली, पति से द्वेश रखने वाली और कटुभाशिणी हो तो पति को पुनर्विवाह का अधिकार है। 'शुंग वंश के राजा अग्निमित्र के भी तीन पत्नियॉ थीं। राजा के अलावे सर्वसाधारण लोगों मे भी बहुविवाह का चलन था।'[27]

प्राचीन भारतीय सामाजिक जीवन मे कुछ जातियों एवं कुलों मे **बहुपतित्व विवाह** की प्रथा भी विद्यमान थी। इस विवेचना काल मे भी इसके कुछ उदाहरण मिलते है। द्रौपदी के पॉच पति थे। विश्णुपुराण के अनुसार मारिया के दस पति थे। 'इस प्रकार का विवाह पुरानी प्रथा के अनुरूप होने के कारण धर्मसम्मत है।'[28] परन्तु बहुपति विवाह की प्रथा कतिपय कुलों तक ही सीमित थी।'[29] धर्मशास्त्रों मे इसका समर्थन नही किया गया था। कुछ विशेश परिस्थितियों मे स्त्री को **पुनर्विवाह** करने की अनुमति भी धर्मशास्त्रों से प्रदान की गई थी। परंतु इस संबंध मे धर्मशास्त्रों मे एकमतता नही है। मनुस्मृति मे पति के मर जाने पर भी पत्नी के लिए पुनर्विवाह करना निशेधित ठहराया गया है। मनु के अनुसार विधवा का सर्वोत्तम धर्म यही है कि वह ब्रह्मचारिणी रहते हुए तप संयम का जीवन बीताए। स्मृतियों और धर्मसूत्रों के निर्माण काल मे इसे निशिध ठहरा दिया गया था। 'परंतु अर्थशास्त्र मे कुछ दशाओं मे स्त्री के लिए पुनर्विवाह का स्पश्ट प्रमाण मिलता है।'[30] मनु ने भी अक्षत् योनि **विधवा के पुनर्विवाह** के अधिकार को स्वीकार किया है। नारदस्मृति के अनुसार पति के विदेश चले जाने पर ब्राह्मण पत्नी को आठ वर्श और यदि उसके कोई संतान नही हो तो चार वर्श तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। इतनी अवधि के बीत जाने पर यदि पति वापस न आये, तो स्त्री पुनर्विवाह कर सकती है। साथ ही, यह भी कहा गया है कि यदि पति नश्ट (लापता) हो गया हो, मर गया हो, प्रव्रज्जा ग्रहण कर ले, नपुंसक हो या पतित हो तो इन पॉच दशाओं मे स्त्री अन्य पुरूश से विवाह कर सकती है। इस तथ्य का समर्थन पराशरस्मृति एवं अग्निपुराण मे भी किया गया है। प्राचीन ग्रंथों मे पुनर्विवाह करने वाली स्त्री के लिए 'पुनभू' शब्द का प्रयोग किया गया है।

प्राचीन काल मे **नियोग** की प्रथा भी प्रचलित थी। धर्मसूत्रों एवं स्मृतिकारों को भी नियोग स्वीकार्य था। गौतम धर्मसूत्र मे लिखा है कि पतिविहीन स्त्री को यदि अपत्य की कामना हो, तो वह उसे देवर से प्राप्त कर सकती है। 'मनु के अनुसार संतान न होने की दशा मे संतान की इच्छुक स्त्री देवर से या सपिण्ड पुरूश से नियोग कर सकती है।'[31] इस प्रकार उत्पन्न हुई संतान स्त्री के पति की ही मानी जाएगी, देवर या उस सपिण्ड पुरूश की नही जिससे नियोग

द्वारा संतान प्राप्त की गई थी। नियोग से उत्पन्न संतान को 'क्षेत्रज' की संज्ञा दी गई थी। नारद और याज्ञवल्क्य को भी यह मत स्वीकार था। 'संभोग के लिए अन्य किसी पुरूश से संबंध करना शास्त्रकारों की दृश्टि मे अत्यंत निंदनीय था।'[32] इस तरह के संभोग से उत्पन्न संतान को 'जारज' कहा जाता था। कालांतर मे नियोग प्रथा पर निशेध लगा दिया गया।

मौर्य युग एवं पूर्ववर्ती काल मे **मोक्ष (तलाक)** की प्रथा भारत मे प्रचलित थी। अर्थशास्त्र मे वर्णित है कि पति और पत्नी दोनों विवाह संबंध से मोक्ष प्राप्त कर सकते है। जातक कथाओं मे भी इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। 'बाद मे शास्त्रकार यह प्रतिपादित करने लगे कि पति–पत्नी का संबंध शाश्वत है और उसका किसी भी दशा मे उच्छेद (विच्छेद) नही करना चाहिए।'[33] मनुस्मृति मे लिखा है कि पति चाहे विशील (जो सदाचारी न हो), कामवृत (कामी) व अन्य गुणों से विहीन भी क्यो न हो, साधवी पत्नी को सदा देवता के समान उसकी उपचर्या (सेवा) करनी चाहिए। यद्यपि शास्त्रकार ने कई परिस्थितियों मे पुरूश को स्त्री से मोक्ष होने का अधिकार दिया था परन्तु स्त्री को इन अध्किारों से वंचित किया गया था। खासकर स्त्री के लिए विवाह संबंध का निर्वाह करना ही श्रेश्यकर था।

मौर्योत्तर काल मे स्त्री को **शिक्षा** से वंचित कर दिया गया था। दूसरी सदी ई. पूर्व तक उनका उपनयन व्यवहारतः बंद हो चुका था। विवाह के अवसर पर उनका उपनयन संस्कार संपन्न कर दिया जाता था। 'स्मृतिकारों ने व्यवस्था कर दी कि बालिकाओं के उपनयन मे वैदिक मंत्र नही पढ़ना चाहिए।'[34] कालांतर मे वेदों के पठन–पाठन और यज्ञों मे सम्मिलित होने के अधिकार से वह वंचित कर दी गई। वह केवल अपने माता–पिता, भाई–बंधु इत्यादि से अपने घर पर ही शिक्षा प्राप्त कर सकती थी।

प्राचीन काल मे स्त्रियों को सम्पति–विशयक अधिकार प्रदान किये गये थे। परंतु दूसरी सदी ई. पू. मे आकर उनके **साम्पतिक अधिकार** भी क्षतिग्रस्त होने लगे। 'वशिश्ठ, गौतम और मनु ने भी उत्तराधिकारिणी के रूप मे पुत्री का कहीं नाम नही लिया है',[35] परंतु इसके विपरीत दूसरे शास्त्रकारों ने अत्यंत उदारतापूर्वक पुत्री के उतराधिकारी होने के मत का प्रतिपादन किया है। 'महाभारत मे उसके इस स्वत्व को पुत्र के समकक्ष स्वीकार किया गया है।'[36] 'याज्ञवल्क्य ने दृढ़तापूर्वक अपना विचार दिया है कि पुत्र और विधवा के अभाव मे पुत्री ही उतराधिकारिणी है।'[37] विधवा को सम्पति मे अधिकार नाम मात्र का ही दिया गया। वह भी ऐसी परिस्थिति मे जब उसका भरण–पोशण करने का कोई अन्य उपाय न हो। मनु के अनुसार वैवाहिक अग्नि के सम्मुख जो कुछ कन्या को उपहार स्वरूप दिया जाता है, वह सब स्त्री धन है जिसके छः प्रकार बताये गये हैं।[38]

निश्कर्श :

इस प्रकार मौर्योत्तर काल मे स्त्री के प्रति समाज का व्यवहार दिनों–दिन कठोर होता गया। उस पर अनेक नियंत्रण लगााये गये तथा सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक दृश्टियों से उसे प्रतिबंधित कर दिया गया। हालांकि कुछ स्मृतिकारों एवं सूत्रकारों ने विशेश अवसर एवं परिस्थिति मे कुछ अधिकार स्त्रियों को प्रदान अवश्य किये थे परंतु इस समय कई ऐसे स्त्री हुई जिन्होंने अपने समय मे संपूर्ण साम्राज्य का नेतृत्व किया और सफल प्रशासन दी जिसमे सातवाहन वंश और गुप्तवंश की राजकीय स्त्रियॉ उल्लेखनीय है। संक्षेप मे हम यह कह सकते है कि मौर्योत्तरकालीन समाज के विधि–विधानों एवं परम्पराओं का भारतीय स्त्री जीवन पर दूरगामी प्रभाव पड़ा।

संदर्भ–ग्रंथ सूचीः–

1. मनुस्मृति, 9.3.
2. वही, 9.96.
3. वही, 5.160.
4. वही, 5.161.
5. महाभाश्य, भाग 1, 411.
6. मनुस्मृति, 1, 88–91.
7. वही, 9, 317.
8. मालविकाग्निमित्रम, अंक–2, 59 पैसेज
9. आपस्तम्ब धर्मसूत्र, 2.17; मनुस्मति, 3.27.
10. बौधायन धर्मसूत्र, 1.11.5.
11. वीरमित्रोदय, पृश्ठ 850.
12. महाभारत, 1.122.9.
13. मालविकाग्निमित्रम, अंक 4, पैसेज 3, संस्कारकौस्तुंभ, पृश्ठ 732.
14. मनुस्मृति, 3.31, बौधायन धर्मसूत्र, 2.1.79.
15. आचारांग सूत्र, 2.20, मनुस्मृति, 3.32, ऋग्वेद, 10.34, विश्णुपुराण, 4.6.35.47.
16. महाभारत, 1.121.21.23; 1.6.4.22.
17. विश्णुपुराण, 5.26.11
18. मनुस्मृति, 3.34; याज्ञवल्क्य स्मृति, 1.61.
19. रामायण, 1.66.67.
20. महाभारत
21. मनुस्मृति, 9.94.
22. के. बी. रंगस्वामी – इंडियन इंहेरिटेन्स, अंक–3; पृश्ठ 26.
23. मालविकाग्निमित्रम, उच्छ्वास 1.
24. भागवत पुराण, 9.21.24.
25. वही, 1.81, 18; विश्णुपुराण, 4;10;14;
26. मैत्रक संहिता, 1.58.
27. मनुस्मृति, 3.24.
28. अर्थशास्त्र, अध्याय 59.
29. मनुस्मृति, 9, 72, 73, 80, 81, 82.
30. अर्थशास्त्र, अध्याय 61, पृश्ठ 159.
31. मनुस्मृति, 3.10.
32. मालविकाग्नमित्रम, नामी, पृश्ठ 35.
33. मनुस्मृति, 3.5.
34. वही, 2.56, 9.18.
35. वशिश्ठ धर्मसूत्र, 15.7, गौतम धर्मसूत्र, 28.21, मनुस्मृति, 9.185.
36. महाभारत, 13.80.11.
37. याज्ञवल्क्यस्मृति, 2.135.
38. मनुस्मृति, 9.194.